भीष्म पितामह

भीष्म पितामह

लेखक
सन्तराम बत्स्य

गोविन्दराम हासानन्द दिल्ली-६

मूल्य : १०.००

प्रकाशक : **गोविन्दराम हासानन्द**, ४४०८, नई सड़क, दिल्ली-६ /
संस्करण : १९८९ / मुद्रक : अजय प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा,
दिल्ली-११००३२ / © सुबोध
BHISHMA PITAMAH by Santram Vats.

भीष्म पितामह

शान्तनु कुरु-वंश के विख्यात सम्राट् थे। वे एक दिन शिकार के लिए जंगल में गए हुए थे। वहाँ उन्होंने अत्यन्त रूपवती स्त्री के रूप में गंगा (नदी) को देखा। उन्होंने गंगा से अपनी महारानी बनने के लिए निवेदन किया। गंगा ने पहले तो मना किया, किन्तु जब महाराज शान्तनु बार-बार आग्रह करने लगे तो गंगा ने कहा कि मेरी कुछ शर्तें हैं, यदि आप उन्हें मान लें तो मैं आपसे विवाह कर सकती हूँ। किन्तु यह भी ध्यान रखें कि जिस दिन आप शर्त को तोड़ देंगे, मैं आपको छोड़कर चली जाऊँगी।

महाराज शान्तनु ने गंगा की सभी शर्तें मान लीं और दोनों का विवाह हो गया।

गंगा को अपनी महारानी बनाकर महाराज शान्तनु बड़े आनन्द में जीवन बिताने लगे। जब गंगा के पहला पुत्र हुआ तो उसने उसे गंगा में बहा दिया। महाराज शान्तनु को यह बात अच्छी तो नहीं लगी पर वे इसका विरोध भी नहीं कर सके, क्योंकि गंगा ने पहले ही यह

शर्त मनवाई हुई थी कि वह मनचाहा करेगी और उसे महाराज रोकेंगे नहीं।

इसी तरह एक के बाद एक गंगा ने सात पुत्रों को जन्म दिया और प्रत्येक को जन्मते ही गंगा में बहा दिया। पर जब आठवाँ पुत्र पैदा हुआ और महारानी उसे भी नदी में बहाने चली तो शान्तनु से नहीं रहा गया। महाराज ने गंगा को रोक दिया।

गंगा रुक तो गई, पर शर्त के अनुसार उसने राजा के साथ रहना छोड़ दिया और पुत्र को लेकर चली गई।

पुत्र की शिक्षा का गंगा ने उचित प्रबन्ध किया और उसे सब तरह से योग्य बनाया।

वर्ष पर वर्ष बीतते गए। राजा शान्तनु पुत्र और पत्नी के बिना उदास रहने लगे। किसी काम में उनका मन नहीं लगता था। उन्होंने शिकार खेलना भी बन्द कर दिया। तीस-पैंतीस वर्ष इसी तरह व्यतीत हो गए।

फिर एक दिन जब राजा शान्तनु शिकार खेलने गए तो एक हिरन का पीछा करते हुए गंगा नदी के प्रवाह तक निकल गए। जब वे गंगा के तट पर पहुँचे तो उन्हें यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि एकाएक गंगा का पानी यहाँ कम कैसे हो गया है।

जब शान्तनु ने प्रवाह के ऊपर की ओर देखा तो उनको यह देखकर विस्मय हुआ कि एक सुन्दर-स्वस्थ

युवक ने अपने अचूक बाणों द्वारा गंगा के प्रवाह को रोक रखा है।

इस युवक के अस्त्र-विद्या के कौशल को देखकर राजा शान्तनु दंग रह गए।

यह युवक शान्तनु का पुत्र देवव्रत ही था जिसे गंगा अपने साथ ले गई थी। किन्तु राजा ने तो उसे शिशु अवस्था में देखा था, इसलिए वे कैसे पहचानते? ज्योंही शान्तनु की दृष्टि उस युवक पर पड़ी, वह दृष्टि से ओझल हो गया। शान्तनु ने सोचा कि कहीं यह गंगा द्वारा उत्पन्न मेरा पुत्र ही तो नहीं है? यह विचार आते ही उसने गंगा से प्रार्थना की कि वह स्वयं भी प्रकट होकर दर्शन दें और पुत्र से भी भेंट कराएँ।

शान्तनु के प्रार्थना करने पर स्त्री-वेश में गंगादेवी प्रकट हुईं। वे श्वेतवर्ण के वस्त्रों और विविध अलंकारों से विभूषित थीं। उन्होंने पुत्र देवव्रत को भी शान्तनु को सौंप दिया। पुत्र से बिछुड़ते समय गंगा की ममता उमड़ पड़ी। वह पुत्र से अलग होने के कारण विह्वल हो गईं। इसके बाद वे अन्तर्धान हो गईं।

□

शान्तनु देवव्रत को अपनी राजधानी हस्तिनापुर में ले आए। बाद में ज्योतिषियों से शुभ मुहूर्त पूछकर

देवव्रत का युवराज-पद पर अभिषेक कर दिया। राज्य का उत्तराधिकारी बनने के लिए देवव्रत सब प्रकार से योग्य था। वैसे भी वही एकमात्र उत्तराधिकारी था। अस्त्र-शस्त्र-विद्या में तो वह अपने पिता से भी बढ़कर था। राजनीति, रणनीति और शास्त्रों का भी उसे पूरा ज्ञान था। वह राज्य-व्यवस्था में अपने पिता राजा शान्तनु की सहायता करने लगा। अपनी योग्यता और प्रजा के साथ अच्छे व्यवहार के कारण वह शीघ्र ही लोकप्रिय हो गया। प्रजा उसे बहुत चाहने लगी।

युवराज देवव्रत को शान्तनु बहुत चाहते थे। वही तो उनका कुल-दीपक था। देवव्रत भी पिता की प्रत्येक आज्ञा का बड़ी तत्परता से पालन करता और उनको प्रसन्न रखता।

पुत्र को पाकर यद्यपि महाराज शान्तनु फूले नहीं समाते थे, तथापि महारानी गंगा के बिना उन्हें अपना राजमहल सूना-सूना लगता था। जब भी महारानी की याद आती, वे उदास हो जाते। ऐसे अवसर पर वे प्रायः शिकार खेलने के बहाने जंगल की ओर निकल जाते।

एक दिन जब वह शिकार खेलने अकेले जंगल में गए हुए थे, तो उन्हें किसी चीज की भीनी-भीनी सुगन्ध आई। वह सुगन्ध जिस ओर से आ रही थी, शान्तनु

उसी ओर को बढ़ते गए। वह जानना चाहते थे कि यह सुगन्ध किस चीज की है ?

चलते-चलते जब वे यमुना के तट पर पहुँचे तो वहां उन्हें एक मछुए की लड़की दिखाई दी। उस लड़की के शरीर से ही यह सुगन्ध आ रही थी। वह लड़की पूर्ण यौवना और हृष्ट-पुष्ट थी।

प्राय: मछुओं से मछलियों की गन्ध आती है, जो दुर्गन्ध ही होती है। पर यह लड़की तो विचित्र थी ! इसके शरीर से बड़ी मादक सुगन्ध निकल रही थी और पास-पड़ोस में फैली हुई थी। राजा को उस लड़की में कुछ विचित्रता-विशेषता दिखाई दी। राजा ने उसे अपनी रानी बनाने का विचार किया। राजा ने उस लड़की के पिता से जाकर कहा कि तुम इसका विवाह मेरे साथ कर दो। उस कन्या का नाम सत्यवती था।

सत्यवती का पिता बहुत समझदार था। उसने राजा से पूछा कि इससे पहले उसकी कितनी रानियां हैं और कितने राजकुमार ? जब राजा ने बताया कि रानी कोई नहीं है और एक राजकुमार है, जिसका युवराज-पद पर अभिषेक हो चुका है तो उसने अपनी कन्या का राजा से विवाह करना अस्वीकार कर दिया। वह बोला, "राजन् ! मेरी पुत्री से जो सन्तान होगी,

उसे राज्य का उत्तराधिकार नहीं मिलेगा। कारण, आपका बड़ा बेटा देवव्रत ही राज्य का उत्तराधिकारी होगा। आप युवराज-पद पर उसका अभिषेक भी कर चुके हैं। इसलिए मैं अपनी पुत्री का विवाह आपके साथ नहीं कर सकता। यदि आप यह वचन दें कि सत्यवती से जो पुत्र उत्पन्न होगा, राज्य का उत्तराधिकारी वही होगा तो मैं अपनी पुत्री का विवाह आपसे कर सकता हूँ।"

मछुए की यह शर्त सुनकर शान्तनु चुप हो गया। वह निराश होकर राजमहल में लौट आया। उसे मछुए की शर्त अनुचित लगी। देवव्रत को राजा राज्याधिकार से किसी तरह भी वंचित नहीं करना चाहता था।

राजा महल में तो लौट आया, पर दिल उसका सत्यवती में ही अटका रहा। वह क्षण-भर को भी सत्यवती को भूल नहीं पाया।

राजा शान्तनु राज-काज से एकदम उदास रहने लगे। उनका मन अब किसी काम में न लगता था। राजा ने शिकार खेलना भी बन्द कर दिया। राजा जब देखो तब उदास चेहरा लटकाए रहते। न किसी से कुछ बोलते, न किसी को कुछ बताते।

युवराज देवव्रत ने अपने पिता से कई बार पूछा कि वे उदास क्यों हैं, उनके मन में क्या चिन्ता है? पर

राजा ने संकोच के कारण पुत्र को अपने मन की बात नहीं बताई। बस, यों ही टाल दिया।

युवराज ने मन्त्रियों से पूछा, राजपुरोहित से पूछा, पर कुछ भी पता न चला। किसी को कुछ मालूम होता तो वह बताता भी। सभी को बड़ी चिन्ता हुई कि महाराज उदास क्यों हैं?

एक दिन युवराज देवव्रत ने पिता से आग्रहपूर्वक पूछा, "पिता जी, मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि आप किस बात के लिए दुःखी हैं। संसार का कोई सुख ऐसा नहीं जो आपको प्राप्त न हो। मुझसे कोई भूल हो गई हो, जिसके कारण आप दुःखी हों तो मुझे बताइए। आपका चेहरा उदास है और पीला पड़ता जा रहा है। शरीर भी दुबला हो रहा है। आप कृपा करके बताएँ कि आपको किस बात की चिन्ता है?"

पुत्र को सच्ची बात बताने में शान्तनु को झेंप मालूम हुई। वह बात को घुमाकर बोले, "बेटा, तुम्हीं अकेले मेरे कुल के दीपक हो और तुम्हें रण-विद्या का चस्का-सा लग गया है। युद्ध तो राजाओं को करना ही पड़ता है। तुम भी आवश्यकता पड़ने पर रणक्षेत्र में जाओगे। युद्ध में हार-जीत और जीवन-मरण का तो कुछ निश्चय होता नहीं। यदि तुम्हें कुछ हो गया तो फिर क्या होगा? बस, रात-दिन मुझे यही चिन्ता खाए

जा रही है। तभी तो कहते हैं कि अकेला पुत्र माता-पिता के लिए चिन्ता का कारण बन जाता है।"

शान्तनु के मन की बात समझने देवव्रत को देर नहीं लगी। उसने राजा के सारथि से पूछताछ कर सारी बात का पता लगा लिया।

देवव्रत सीधा उस कन्या के पिता धीवर के पास पहुँचा। देवव्रत ने उससे निवेदन किया कि वह अपनी पुत्री का विवाह महाराज शान्तनु से कर दे।

उस धीवर ने अपनी वही शर्त देवव्रत को बता दी।

देवव्रत ने कहा, "मैं ही महाराज का पुत्र हूँ। मैं तुम्हें वचन देता हूँ कि तुम्हारी पुत्री सत्यवती से उत्पन्न पुत्र ही राज्य का उत्तराधिकारी होगा। वही बाद में राजा बनेगा।"

किन्तु वह धीवर भी बहुत चालाक था। देवव्रत के वचन देने पर भी वह नहीं माना। बोला, "युवराज! आपके वचनों पर मुझे पूरा विश्वास है। मैं आपकी पितृ-भक्ति से भी बहुत प्रभावित हूँ। किन्तु मेरे मन में एक और शंका है। कृपा करके उसे भी दूर कर दें। फिर मुझे अपनी पुत्री का विवाह महाराज के साथ करने में कोई आपत्ति नहीं होगी। मैं मानता हूँ कि आप अपना युवराज का अधिकार सत्यवती के पुत्र को दे देंगे। महाराज के बाद वही राजा भी बनेगा; किन्तु

आपकी सन्तान भी आपके वचनों का पालन करेगी, इसका भरोसा कैसे कर सकता हूँ ? आप-जैसे वीर का पुत्र भी वीर ही होगा। यह हो सकता है कि आप जिस राज्य को अपने पिता की प्रसन्नता के लिए तिनके जैसा समझकर छोड़ रहे हैं, आपकी सन्तान उसके लिए झगड़ा करे। उस समय मैं और आप तो होंगे नहीं। यह झगड़ा न हो, इसका तो कोई उपाय नहीं है। आपकी समझ में कोई उपाय हो तो बताइए।"

धीवर की बात सुनकर देवव्रत कुछ देर चुप रह गया। धीवर की शंका व्यर्थ तो नहीं थी। देवव्रत के मस्तिष्क में बिजली-सी कौंध गई। उसे उपाय सूझ गया था। पर वह उपाय इतना सरल नहीं था। सरल हो या कठिन, अपने पिता की प्रसन्नता के लिए देवव्रत कठिन-से-कठिन कार्य कर सकता था। वह बोला, "मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि जीवन-भर विवाह नहीं करूँगा। विवाह नहीं करूँगा तो सन्तान कैसे होगी ! इसलिए सत्यवती के पुत्रों से झगड़नेवाला भी कोई नहीं होगा। अब तो आपकी शंका का समाधान हो गया न ?"

ऐसी भीष्म प्रतिज्ञा करने के कारण ही देवव्रत का नाम भीष्म पड़ गया था।

देवव्रत की ऐसी भीष्म प्रतिज्ञा सुनकर धीवर दंग रह गया। वह सन्तुष्ट था। उसने अपनी पुत्री सत्यवती

को देवव्रत के साथ महाराजा शान्तनु के अन्तःपुर में भेज दिया।

□

सत्यवती से शान्तनु के दो पुत्र पैदा हुए—चित्रांगद और विचित्रवीर्य। शान्तनु के स्वर्ग सिधारने पर बड़ा पुत्र चित्रांगद सिंहासन पर बैठा। बाद में उसके युद्ध में मारे जाने पर छोटा पुत्र विचित्रवीर्य हस्तिनापुर के सिंहासन पर बैठा।

विचित्रवीर्य जब सिंहासन पर बैठा तो उसकी उम्र बहुत छोटी थी। इसलिए उसके बड़ा होने तक सारा राजकाज भीष्म को ही सँभालना पड़ा।

जब विचित्रवीर्य की अवस्था विवाह-योग्य हुई तो भीष्म को उसके विवाह की चिन्ता हुई। इन्हीं दिनों भीष्म को पता लगा कि काशीराज की कन्याओं का स्वयंवर होने वाला है। भीष्म भी उस स्वयंवर में सम्मिलित होने के लिए काशी जा पहुँचे।

काशीराज की पुत्रियाँ अत्यन्त सुन्दरियाँ थीं। रूप के साथ गुणों की भी उनमें कमी नहीं थी। इसलिए देश-विदेश के असंख्य राजकुमार स्वयंवर में भाग लेने काशी आए। स्वयंवर का मण्डप राजकुमारों से भरा हुआ था। प्रत्येक चाहता था कि काशीराज की पुत्रियों

में से कोई एक उसे वरमाला पहनाए।

राजाओं में भीष्म की बहुत मान-प्रतिष्ठा थी। उनकी जीवन-भर विवाह न करने की बात सभी को मालूम थी। इसीलिए जब वे स्वयंवर-मण्डप में आए तो सबने सोचा कि यह केवल देखने मात्र के लिए आए होंगे। परन्तु जब स्वयंवर में भाग लेने वालों की सूची में उन्होंने अपना नाम भी लिखवाया तो अनेक राजकुमारों को बड़ी निराशा हुई। उन्हें क्या पता था कि भीष्म अपने लिए नहीं, अपने सौतेले भाई के लिए स्वयंवर में आए हैं!

सभा में खलबली मच गई। सभी भीष्म की निन्दा करने लगे। लोगों ने समझा कि ढलती अवस्था में भीष्म अपनी प्रतिज्ञा तोड़कर विवाह करने चले हैं! सभी ने तरह-तरह के व्यंग्य कसे। काशीराज की स्वयंवरा कन्याओं ने भीष्म की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखा और वे आगे निकल गईं।

अभिमानी भीष्म को अपना ऐसा अपमान सहन नहीं हुआ। क्रोध के कारण उनका चेहरा तमतमा उठा और आँखें अंगारों की तरह लाल हो गईं। उन्होंने स्वयंवर में आए हुए सभी राजकुमारों को युद्ध के लिए ललकारा और सभी को हराकर काशीराज की तीनों कन्याओं अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका को रथ पर

बिठाकर हस्तिनापुर को चल दिए।

सौभ देश का राजा शाल्व बड़ा वीर और स्वाभिमानी था। काशीराज की सबसे बड़ी पुत्री अम्बा मन-ही-मन उसे अपना पति मान चुकी थी। शाल्व भी चाहता था कि अम्बा उसकी पत्नी बने। उसने हस्तिनापुर जाते हुए भीष्म के रथ का पीछा किया और रथ का मार्ग रोकने का प्रयत्न किया। इसपर दोनों ही वीरों में भयंकर युद्ध छिड़ गया। भीष्म के सामने शाल्व ज्यादा देर नहीं टिक पाया और हार गया। काशीराज की पुत्रियों के प्रार्थना करने पर भीष्म ने उसे जीवित ही छोड़ दिया।

काशीराज की तीनों पुत्रियों को लेकर भीष्म हस्तिनापुर पहुँचे। विचित्रवीर्य के साथ इन तीनों कन्याओं के विवाह की पूरी तैयारी हो गई। जब इन कन्याओं को विवाह-मण्डप में ले जाने लगे तो काशीराज की बड़ी कन्या अम्बा ने भीष्म से कहा, "मैं आपसे एक बात कहना चाहती हूँ। आप धर्म को जानने और मानने वाले हैं। मैंने अपने मन में राजा शाल्व को अपना पति मान लिया था। परन्तु मण्डप से आप बलपूर्वक मुझे यहाँ ले आए, इसलिए मैं उनका पति के रूप में वरण नहीं कर सकी। अब आप स्वयं सोच लीजिए कि मेरे बारे में आपको क्या करना चाहिए।"

धर्मात्मा भीष्म को लगा कि अम्बा का विचित्र-वीर्य से विवाह करना धर्म-सम्मत नहीं है। उन्होंने अम्बा की इच्छा के अनुसार, उचित व्यवस्था करके उसे राजा शाल्व के पास भेज दिया। शेष दो बहनों, अम्बिका और अम्बालिका का विवाह विचित्रवीर्य के साथ कर दिया।

अम्बा ने शाल्व के पास पहुँचकर अपने मन की बात बताई। वह बोली, "राजन्! मैं मन से आपको अपना पति स्वीकार कर चुकी हूँ। मेरे कहने से भीष्म ने मुझे आपके पास भेजा है। अब आप मेरे साथ विधिपूर्वक विवाह करके मुझे अपनी पत्नी स्वीकार करें।"

स्वाभिमानी शाल्व ने अम्बा को पत्नी-रूप में स्वीकार करने से इनकार कर दिया। उसने कहा, "मैं भीष्म से पराजित हो चुका हूँ और वह बलपूर्वक तुम्हें हरकर ले गया था। अब मैं तुम्हें स्वीकार नहीं कर सकता। तुम भीष्म के ही पास जाओ और जैसा वह कहे, वैसा करो।"

अम्बा बेचारी क्या करती! वह तो कहीं की न रही। जिसे वह चाहती है, वह उसे स्वीकार करने को तैयार नहीं; और जो उसे स्वीकार करने को तैयार था, उसे छोड़कर वह आ गई।

बेचारी अम्बा निराश होकर फिर भीष्म के पास हस्तिनापुर लौट आई और भीष्म को सारी बात कह सुनाई। भीष्म ने विचित्रवीर्य से कहा, "राजा शाल्व ने अम्बा को अपनी पत्नी बनाना अस्वीकार कर दिया है। इसलिए अब तुम इसके साथ विवाह कर लो। पहले इसके साथ विवाह करने में जो आपत्ति थी, वह अब नहीं रही।" पर विचित्रवीर्य अम्बा को ब्याहने के लिए राजी नहीं हुआ। उसने कहा, "जो मन से किसी दूसरे को अपना पति स्वीकार कर चुकी है, उसे मैं पत्नी-रूप में स्वीकार नहीं कर सकता।"

बेचारी अम्बा न इधर की रही, न उधर की। वह भीष्म से बोली, "मैं दोनों ओर से ही गई। यदि आप मेरा हरण न करते तो मैं इस विपत्ति में न पड़ती। मेरे ऊपर जो यह संकट आया है, आपके ही कारण है। इसलिए अब आप ही मुझसे विवाह कीजिए।"

भीष्म ने अम्बा की बात सुनकर कहा, "सारा संसार जानता है कि मैंने जीवन-भर विवाह न करने की प्रतिज्ञा की हुई है। मैं अपनी प्रतिज्ञा को नहीं तोड़ सकता।"

भीष्म ने एक बार फिर विचित्रवीर्य को अम्बा से ब्याह करने को कहा, पर वह नहीं माना। इसपर भीष्म ने अम्बा को सलाह दी कि तुम एक बार फिर

शाल्व के पास जाओ और उसे मनाने का प्रयत्न करो।

विवश होकर अम्बा फिर शाल्व के पास गई और अनुनय-विनय करके उसे मनाने का प्रयत्न किया। पर वह अपनी बात पर अड़ा रहा और उसने अम्बा को, जिसे दूसरा बलपूर्वक हर ले गया था, अपनी पत्नी बनाने से साफ इनकार कर दिया।

काशीराज की बड़ी पुत्री, रूप-गुण-सम्पन्ना अम्बा इसी तरह छः वर्ष हस्तिनापुर और सौभ देश के बीच चक्कर काटती रही और बार-बार ठुकराई जाती रही। रो-रोकर, अपमानित हो-होकर वह गेंद की तरह दोनों ओर की ठोकरें खाती रही। संभवतः इससे पूर्व किसी राजपुत्री को इतना अपमानित नहीं होना पड़ा था। अम्बा अपनी इस विपत्ति के लिए एकमात्र भीष्म को ही उत्तरदायी मानती थी। जब वह पूरी तरह निराश हो गई तो उसने भीष्म से इसका बदला लेने का निश्चय किया।

वह कई राजाओं के पास गई और उन सबको उसने अपना दुखड़ा सुनाया और भीष्म से युद्ध करने की प्रार्थना की, पर ये राजा तो भीष्म के नाम से काँपते थे, उसके साथ युद्ध कैसे करते! अब तो अम्बा के दुःख-कष्ट की सीमा न रही।

उसने भीष्म से बदला लेने के लिए देवव्रत को

सहायता लेने का निश्चय किया। उसने भगवान् कार्तिकेय की आराधना शुरू कर दी। भगवान् कार्तिकेय ने उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर उसे दर्शन दिए और सदा ताजे रहनेवाले फूलों की माला देते हुए कहा, "जो यह माला पहनेगा, वह भीष्म के नाश का कारण बनेगा।"

माला पाकर अम्बा बड़ी प्रसन्न हुई। उसे निश्चय हो गया कि अब उसकी इच्छा पूरी होकर रहेगी। उस माला को लेकर वह फिर कई राजाओं के पास गई और उन्हें बताया कि भगवान् कार्तिकेय की दी हुई इस माला को जो भी पहनेगा, वह भीष्म के नाश का कारण बनेगा, पर एक भी क्षत्रिय ऐसा नहीं मिला जो भीष्म से लड़ने का साहस करता।

राजाओं में भीष्म से लड़ने का साहस भले ही न हो, पर अम्बा पीछे हटनेवाली नहीं थी। वह अब भी बदला लेने के अपने निश्चय पर दृढ़ थी। वह पांचाल देश के राजा द्रुपद के पास गई और उनसे भीष्म से लड़ने की प्रार्थना की। पर जब राजा द्रुपद ने भी उसकी बात न मानी तो वह अत्यन्त दुःखी हुई। अब उसे लगा कि मैं व्यर्थ ही इस माला को उठाए फिर रही हूँ। घोर निराशा में उसने वह माला द्रुपद के महल के द्वार पर टाँग दी और स्वयं चली गई।

अम्बा को क्षत्रियों में भीष्म से टक्कर लेनेवाला जब एक भी शूरवीर न मिला तो उसने तपस्वी ब्राह्मणों की शरण ली। जब वह कुछ तपस्वियों के पास गई तो उन सबने उसे भगवान् परशुराम के पास जाने को कहा। उनकी सलाह मानकर अम्बा भगवान् परशुराम जी के पास गई। अम्बा की दुःखभरी कहानी सुनकर परशुराम का वज्र-हृदय भी पसीज उठा। उन्होंने अम्बा से पूछा, "बेटी, तुम मुझसे क्या चाहती हो ? यदि तुम चाहो तो मैं शाल्व को तुमसे ब्याह करने के लिए राजी कर सकता हूँ।"

दुःखी अम्बा ने कहा, "महात्मन् ! अब मैं ब्याह करना नहीं चाहती। मैं तो आपसे यही प्रार्थना करने आई हूँ कि आप भीष्म से युद्ध करके उसे यमलोक का मार्ग दिखाएँ। उसने मुझ अबला के जीवन से जिस तरह खिलवाड़ किया है उसका दण्ड उसे मिलना ही चाहिए।"

परशुराम को अम्बा की बात उचित लगी। क्षत्रियों से तो उनकी पुरानी शत्रुता ठहरी। बड़े जोश के साथ वे भीष्म के पास गए और उसे युद्ध के लिए ललकारा। दोनों में लड़ाई छिड़ गई और कई दिन तक लड़ते रहे, पर कोई भी हार मानने को तैयार न था। दोनों ही अपने समय के प्रसिद्ध शूरवीर और ब्रह्मचारी थे।

अन्त में परशुराम ने हार स्वीकार कर ली और अम्बा से कहा कि मैं जितना कुछ कर सकता था, कर चुका। अब तो यही उचित है कि तुम भीष्म की ही शरण में जाओ।

बेचारी अम्बा को एक बार फिर निराशा ही पल्ले पड़ी। पर वह भी भीष्म के नाश के लिए तुली हुई थी। वह हिमालय पर चली गई और देवाधिदेव भगवान् शंकर की उपासना करने लगी। भगवान् शंकर उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर प्रकट हुए और बोले, "बेटी, मैं तुम पर प्रसन्न हूँ। अगले ही जन्म में तुम्हारे ही हाथों भीष्म की मृत्यु अवश्य होगी।"

इतना कहकर वे अन्तर्धान हो गए।

अम्बा तो भीष्म से बदला लेने के लिए उतावली हो रही थी। उसने सोचा, पता नहीं अभी और कितने वर्ष जीवित रहना पड़ेगा। इसलिए उचित यही है कि आत्मदाह करके जल्दी ही इस शरीर को छोड़कर दूसरा जन्म लूँ, जिससे भीष्म से बदला लेने का समय भी जल्द आए। उसने एक चिता तैयार की और उसमें जल गई।

महादेव के वरदान से अम्बा दूसरे जन्म में राजा द्रुपद की कन्या हुई। पिछले जन्म की सारी बातें उसे अच्छी तरह याद थीं। जब वह कुछ बड़ी हुई तो उसने

खेल-खेल में, महल के द्वार पर टँगी हुई सदा ताजे रहने वाले फूलों की वह माला, जिसे पिछले जन्म में वह स्वयं यहाँ टाँग गई थी, उठाकर गले में पहन ली।

पुत्री को माला पहने देखकर राजा द्रुपद घबरा गए। वह नहीं चाहते थे कि भीष्म के साथ बैर-विरोध करके वे विपत्ति मोल लें। अतः उन्होंने अपनी पुत्री को घर से निकाल दिया। पर पुराने जन्म की स्मृति-वाली यह कन्या जरा भी घबराए बिना वन में तपस्या करने लगी और तपोबल के कारण स्त्री से पुरुष बन गई। उसने अपना नाम शिखण्डी रख लिया।

राजा विचित्रवीर्य ने सात वर्ष तक राज्य किया। वह बड़ा विलासी था। उसका शरीर क्षयरोग से जर्जर हो गया। अन्त में वह स्वर्ग सिधार गया।

अब तो सत्यवती की कोई सन्तान जीवित नहीं थी। उसने अब भीष्म को राजकाज सँभालने के लिए कहा, पर भीष्म ने यह स्वीकार नहीं किया।

विचित्रवीर्य की दोनों पत्नियों—अम्बिका और अम्बालिका से कोई सन्तान नहीं थी। अब इस कुल की सन्तान-परम्परा को आगे बढ़ानेवाला कोई नहीं था।

अन्त में उस समय की सामाजिक व्यवस्था के अनुसार महर्षि व्यास द्वारा अम्बिका और अम्बालिका को एक-एक पुत्र प्राप्त हुआ।

अम्बिका का पुत्र धृतराष्ट्र जन्म से अन्धा था। अतः अम्बालिका के पुत्र पांडु को सिंहासन पर बिठाया गया। पर पांडु की भी शीघ्र ही मृत्यु हो गई। इसलिए राज्य-व्यवस्था को जन्मान्ध धृतराष्ट्र ने संभाल लिया।

धृतराष्ट्र की पत्नी का नाम गान्धारी था। गान्धारी ने सौ पुत्रों को जन्म दिया। ये कौरव कहलाए। पाण्डु की दो रानियाँ थीं—कुन्ती और माद्री। कुन्ती के तीन पुत्र थे—युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन। माद्री के नकुल और सहदेव दो पुत्र थे। इस प्रकार पाण्डु के जो पाँच पुत्र थे, पाण्डव कहलाए।

कौरवों और पाण्डवों में बचपन से ही बैर-विरोध था। इसके दो कारण थे। पहला तो यह कि पाँचों पाण्डव अस्त्र-शस्त्र-विद्या में कौरवों से अधिक योग्य थे। भीम जो कौरवों-पाण्डवों में सबसे बलवान् था, प्रायः कौरवों को पीट-पाट देता था, जिससे बैर बढ़ने लगा। दूसरा कारण यह था कि राज्य के उत्तराधिकारी कौरव होंगे, या पाण्डव, इसका कुछ निश्चय नहीं था। यद्यपि धृतराष्ट्र पाण्डु से बड़े थे और राज्य के उत्तराधिकारी थे, पर जन्मान्ध होने के कारण उन्हें राजगद्दी नहीं मिली। बाद में जब राजा पाण्डु का देहावसान हो गया और पाण्डव अभी छोटे-छोटे थे, तो

राज्य धृतराष्ट्र करने लगे।

धृतराष्ट्र का अपने उद्दण्ड बेटों पर पूरा नियन्त्रण नहीं था। वह पुत्र-स्नेह के कारण उनकी बुराइयों को अनदेखा भी कर देता था।

धृतराष्ट्र ने झगड़े से बचने के लिए पाण्डवों को इन्द्रप्रस्थ में जाकर बसने के लिए कहा। वहाँ नई राजधानी बनाकर पाण्डवों ने राजसूय-यज्ञ किया जिसके कारण उनका खूब यश फैला। कौरवों की ईर्ष्या, पाण्डवों की कीर्ति के कारण और बढ़ गई।

भीष्म कौरवों की राजधानी हस्तिनापुर में ही रहते रहे। उन्होंने धृतराष्ट्र के सबसे बड़े पुत्र दुर्योधन को कई बार समझाया कि वह पाण्डवों से बैर न रखे, पर दुर्योधन नहीं माना।

जब दुर्योधन ने छल-कपटपूर्वक जुआ खेलकर पाण्डवों का सब-कुछ जीत लिया, यहाँ तक कि द्रौपदी को भी युधिष्ठिर ने दाँव पर लगाकर हार दिया तो दुर्योधन की आज्ञा से दुःशासन द्रौपदी को भरी सभा में निर्वस्त्र करने लगा। भीष्म भी वहाँ बैठे हुए थे। इतने बड़े अत्याचार का वे विरोध नहीं कर सके। यह घटना उनके माथे पर कलंक-रेखा की तरह है। वे ऐसे घोर संकट के समय में भी यह कहकर कि "मैं अर्थ का दास हूँ" छुट्टी पा जाते हैं। पर भीष्म जैसे महान्

व्यक्ति के लिए राजनीति या सम्पत्ति की दासता स्वीकार करना किसी प्रकार भी शोभाजनक प्रतीत नहीं होता।

अन्त में जब कौरवों और पाण्डवों के बीच युद्ध श्रीकृष्ण जैसे राजनीतिज्ञों के प्रयत्नों से भी नहीं टला, तो दोनों पक्ष युद्ध की तैयारी करने लगे।

इस समय तक भीष्म पर्याप्त वृद्ध हो चुके थे। वे कौरवों-पाण्डवों के दादा थे और इसीलिए भीष्म पितामह कहलाते थे।

भीष्म वृद्ध भले ही हो गए थे, पर सारा जीवन ब्रह्मचारी रहने के कारण वे अत्यन्त बलवान् थे। उनका युद्ध-कौशल तो गजब का था। श्री परशुराम जैसे ब्राह्मण-वीर को हराकर उन्होंने बड़ी प्रसिद्धि प्राप्त की थी।

जब कौरव और पाण्डव-पक्ष की सेनाएँ सजने लगीं तो कौरव-पक्ष के सामने यह प्रश्न आया कि सेनापति किसे बनाया जाए? द्रोणाचार्य, कृपाचार्य आदि सभी ने भीष्म पितामह को सेनापति बनाने पर जोर दिया। दुर्योधन को भी यह सुझाव पसन्द आया।

दुर्योधन भीष्म पितामह के पास गया और हाथ जोड़कर बोला, "जैसे देवताओं के सेनापति भगवान् कार्तिकेय बने थे और देवताओं की विजय हुई थी, वैसे

ही आप भी हमारे सेनापति बनें और कौरवों को विजयी कराएँ। हम सब महारथी और वीर सैनिक आपके कुशल निदेशन में प्राणों का मोह छोड़कर लड़ेंगे और शत्रु को परास्त करेंगे।"

भीष्म ने सेनापति बनने के लिए दुर्योधन को स्वीकृति तो दे दी, परन्तु साथ में एक शर्त भी लगा दी। वे बोले, "मेरे लिए कौरव और पाण्डव दोनों बराबर हैं। फिर भी मैं अपने सेनापति के कर्त्तव्य को पूरी तरह निभाऊँगा। हाँ, मैं पाण्डु के पाँचों पुत्रों में से किसी को भी जान से नहीं मारूँगा। तुमने युद्ध मुझसे पूछकर तो प्रारम्भ किया नहीं। मेरी यह प्रतिज्ञा अटल है। एक बात और भी मुझे कहनी है। कर्ण तुम्हारा बड़ा घनिष्ठ मित्र है। वह शुरू से ही मेरी सम्मतियों का विरोध करता रहा है। तुम उससे भी सलाह कर लो। यदि वह सेनापति का कार्य सँभालने के लिए तैयार हो तो उसे ही सेनापति बना दो।"

दुर्योधन ने सोच-विचारकर भीष्म पितामह की शर्त मान ली। किन्तु जब कर्ण को पता चला कि कौरव-सेना के सेनापति भीष्म पितामह मनोनीत हुए हैं, तो उसने दुर्योधन को साफ-साफ बता दिया कि मैं भीष्म के सेनापतित्व में युद्ध नहीं करूँगा। यदि भीष्म मारे जाएँगे या सेनापति-पद से हट जाएँगे, तभी युद्ध-

भूमि में पैर रखूँगा। हाँ, कर्ण की एक शर्त और भी थी, वह यह कि पाँच पाण्डवों में से वह केवल अर्जुन के ही प्राण लेगा, और किसी के नहीं।

भीष्म पितामह के सेनापतित्व में कौरव-सेना समुद्र की तरह लहरें मारती कुरुक्षेत्र की ओर चल पड़ी।

□

अगले दिन धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र में कौरवों और पाण्डवों में युद्ध प्रारम्भ होना था। दोनों पक्षों के प्रमुख लोगों ने मिलकर युद्ध में पालन करने योग्य नियम तय कर लिए। नियम इस प्रकार थे—

१. सूर्यास्त के बाद लड़ाई बन्द होगी।

२. लड़ाई बन्द होने के बाद दोनों पक्षों के लोग एक-दूसरे से मिल सकेंगे।

३. लड़ाई समान बलवानों में ही होगी।

४. अनुचित तरीकों से लड़ाई नहीं लड़ी जाएगी।

५. जो रणभूमि से बाहर चला जाएगा, उसपर शस्त्र-प्रहार नहीं होगा।

६. रथवाला रथवाले से, हाथीसवार हाथीसवार से, घुड़सवार घुड़सवार से और पैदल से पैदल ही लड़ेगा।

७. शत्रु की बात पर विश्वास करके जो लड़ना

बन्द कर दे या हार मान ले, उसपर कोई प्रहार नहीं करेगा।

८. जब दो वीर आपस में लड़ रहे हों तो तीसरा व्यक्ति सूचना दिए बिना या सावधान किए बिना, उनमें से किसी पर आक्रमण नहीं करेगा।

९. निहत्थे, असावधान, युद्ध से पीठ दिखानेवाले, तथा कवच से रहित व्यक्ति पर आक्रमण नहीं किया जाएगा।

१०. लड़नेवालों के पास अस्त्र-शस्त्र पहुँचानेवालों, नौकरों-चाकरों, युद्ध के बाजे बजानेवालों पर कोई हथियार नहीं उठाएगा।

दोनों पक्षों के लोगों ने इन नियमों को कठोरता के साथ पालने की प्रतिज्ञा की। फिर ये नियम युद्ध में भाग लेनेवाले दोनों पक्षों के समस्त सैनिकों को सुना दिए गए और इनका भली प्रकार पालन करने की आज्ञा दी गई।

आज युद्ध का पहला दिन है। दोनों पक्षों की सेनाएँ आमने-सामने खड़ी हैं। थोड़ी ही देर बाद युद्ध प्रारम्भ होगा। कौरवों के सेनापति भीष्म पितामह ने अपने पक्ष के वीरों को उत्साहित करते हुए कहा—"वीरो! क्षत्रियों की मनोकामनाओं को पूरा करनेवाला युद्ध प्रारम्भ होनेवाला है। इसमें हर तरफ से लाभ-

हो-लाभ है। यदि विजय मिली तो यश और कीर्ति प्राप्त होगी, और यदि वीरगति प्राप्त हुई तो स्वर्ग मिलेगा। इसलिए प्राणों का मोह छोड़कर शत्रु पर आक्रमण कीजिए और अपने कुल का गौरव बढ़ाइए। मृत्यु तो अवश्यम्भावी है। रोग से ग्रस्त होकर या बुढ़ापे से जर्जर होकर मरने में दुःख-ही-दुःख है। युद्ध में शत्रु की छाती पर प्रहार करते हुए और अपनी छाती पर शत्रु का प्रहार सहते मरना बड़े ही सौभाग्य की बात है। आपका कर्त्तव्य आपके सामने उपस्थित है। अपने पूर्वजों की शूरवीरता का स्मरण करते हुए क्षत्रिय धर्म का तत्परता से पालन कीजिए।"

सेनापति भीष्म पितामह की जोशभरी बातें सुनकर वीरों ने कौरवों का जय-जयकार किया और रण-वाद्य बजाने प्रारम्भ कर दिए। बस, आज्ञा मिलने की देर थी। शत्रुओं के प्राणों के प्यासे वीर उनपर टूट पड़ने के लिए तैयार थे।

जो महारथी थे, उनके रथों पर बड़ी-बड़ी ध्वजाएँ फहरा रही थीं। सबकी ध्वजाओं पर अलग-अलग चिह्न बने हुए थे। सेनापति भीष्म का रथ बहुत बड़ा तो था ही, सेनापति के चिह्नों से भी युक्त था। भीष्म के रथ की ध्वजा पर ताड़ के पेड़ और ताराओं के चित्र अंकित थे। द्रोण-पुत्र अश्वत्थामा की ध्वजा पर सिंह की पूँछ

का चित्र था। द्रोणाचार्य की ध्वजा पर कमण्डलु और धनुषबाण का चिह्न बना हुआ था। कौरवों में सबसे ज्येष्ठ और श्रेष्ठ वीर दुर्योधन की ध्वजा पर फन फैलाए एक साँप का चित्र अंकित था। कृपाचार्य की ध्वजा पर बैल का और जयद्रथ की ध्वजा पर सूअर अंकित था।

कौरवों की सेना पाण्डवों की सेना से बहुत अधिक थी। पर पाण्डव अपनी विजय के प्रति पूरे आशावान् थे। भगवान् श्रीकृष्ण ने अपनी सेना तो कौरवों को दी थी और स्वयं पाण्डवों की ओर थे। उन्होंने यह भी स्पष्ट कह दिया था कि मैं युद्ध में हथियार नहीं उठाऊँगा। फिर भी अर्जुन ने सेना न लेकर श्रीकृष्ण को ही अपने पक्ष में लिया था और पाण्डवों के सलाहकार भगवान् श्रीकृष्ण ही थे।

कौरव-सेना की अगली पंक्ति में दुःशासन था, जबकि पाण्डव-सेना की अगली पंक्ति में भीमसेन था।

आज पहले दिन युद्ध प्रारम्भ हो रहा है। दोनों ओर के वीर सिंह-गर्जना कर रहे हैं। शंखों की तुमुल ध्वनि गूँज रही है। भेरियों का भैरव नाद हो रहा है। हाथी चिंघाड़ रहे हैं। घोड़े हिनहिना रहे हैं। बाण सरसरा रहे हैं। रथों के पहियों की घर-घर ध्वनि हो रही है। लहू की नदी बह चली है। पुराने सारे

सम्बन्धों को भूलकर दोनों पक्ष मार-काट मचा रहे हैं।

पहले ही दिन कौरव-सेनापति भीष्म पितामह ने पाण्डवों पर ऐसा शक्तिशाली आक्रमण किया कि पाण्डव-सेना थर्रा उठी। भीष्म का रथ जिस ओर निकल जाता, पाण्डव-सैनिकों के शवों से धरती पट जाती। इस महाविनाश को देखकर पाण्डव-पक्ष से अभिमन्यु आगे बढ़ा। उसने भीष्म पितामह को आगे बढ़ने से रोका। परपोते और परदादा का यह युद्ध देखकर सभी दंग रह गए। अवस्था में सबसे छोटे अभिमन्यु के तेज और शूरवीरता को देखकर भीष्म भी चकित रह गए। अभिमन्यु को बढ़ता देखकर कौरव-वीरों ने उसे घेरने का प्रयत्न किया। अभिमन्यु ने भीष्म द्वारा चलाए हुए बाणों को अपने तीखे बाणों से काटकर, एक बाण ऐसा मारा कि भीष्म के रथ की ध्वजा कट गई। भीष्म के रथ की ध्वजा कटी देखकर भीमसेन मारे प्रसन्नता के उछल पड़े और जोर की सिंह-गर्जना की। ताऊ की गर्जना सुनकर भतीजे अभिमन्यु का साहस दुगुना हो गया। वैसे परपोते अभिमन्यु के रणकौशल को देखकर पितामह भी मन-ही-मन प्रसन्न हो रहे थे। जब भीष्म पितामह उत्तेजित होकर अभिमन्यु पर बाण-वर्षा करने लगे तो पाण्डव वीरों ने घेरा डालकर अभिमन्यु को बीच में ले लिया।

अब तो भीष्म पितामह को अपना रथ दूसरी ओर घुमाना पड़ा।

विराट्राज के छोटे पुत्र को शल्य ने मार डाला। उसका बदला लेने के लिए विराट्राज का बड़ा पुत्र श्वेत क्रोध में भरा हुआ शल्य पर टूट पड़ा। शल्य को बचाने के लिए कौरव-रथियों की एक टोली श्वेत से लड़ने लगी। पर उन सबको आता देखकर श्वेत भीष्म पर टूट पड़ा। उसने उनके रथ की ध्वजा फिर काट-कर गिरा दी। भीष्म ने भी श्वेत के घोड़ों और सारथि को मार गिराया।

अब तो श्वेत ने भारी गदा उठाकर ज़ोर से घुमाई और भीष्म के रथ पर दे मारी। भीष्म को रथ पर से कूदकर अपने प्राण बचाने पड़े। श्वेत की गदा की चोट से सेनापति भीष्म का रथ चूर-चूर हो गया। यह देख बूढ़े भीष्म क्रोध के मारे उत्तेजित हो गए और एक ऐसा तीखा बाण श्वेत को मारा कि वह मौत के मुँह में चला गया।

पहले दिन के युद्ध में कौरवों का पलड़ा भारी रहा। पाण्डवों की सेना खूब पिटी। धर्मराज युधिष्ठिर को घबराहट होने लगी। युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण को अपनी घबराहट कह सुनाई। श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को धैर्य बँधाया और बताया कि आपके चारों भाई बड़े

शूरवीर हैं, बड़े-बड़े शूरवीर आपके पक्ष में हैं। आप मन में रत्ती-भर चिन्ता न करें। विजय आपकी ही होगी।

□

दूसरे दिन कौरवों ने दूने उत्साह से पाण्डव-सेना पर आक्रमण किया। पाण्डव-सेना तितर-बितर हो गई। उसमें हाहाकार मच गया और लाशों के ढेर लग गए। यह देखकर अर्जुन ने भगवान् श्रीकृष्ण से कहा कि इस तरह तो पितामह भीष्म हमारी सेना को मटियामेट करके छोड़ेंगे। इसलिए हमें सबसे पहले भीष्म पितामह के साथ निर्णायक युद्ध करना होगा।

श्रीकृष्ण यह सुनते ही रथ को भीष्म के सामने ले गए। अर्जुन के रथ को अपनी ओर आते देखकर भीष्म ने बाण बरसाने प्रारम्भ कर दिए। अर्जुन को भीष्म से भिड़ते देखकर दूसरे कौरव-वीर तुरन्त भीष्म की सहायता के लिए आ पहुँचे। उन्हें दुर्योधन का यही आदेश था। युद्ध में सेनापति की सुरक्षा बड़ी आवश्यक होती है। पर अर्जुन कोई ऐसा-वैसा वीर नहीं था। उसका मार्ग रोकना मृत्यु को निमन्त्रण देना था। सारी कौरव-सेना में तीन ही ऐसे शूरवीर थे, जो अर्जुन के सामने टिक सकते थे। ये थे : भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य और कर्ण। शेष वीरों को तो वह किसी गिनती

में ही नहीं समझता था। अर्जुन कौरव वीरों के घेरे को तोड़कर उनके बीच से रथ बढ़ाकर निकल गया, पर किसी की हिम्मत उसे रोकने की नहीं हुई। अर्जुन के रथ को श्रीकृष्ण इस कौशल से चला रहे थे कि उसे ठीक से देख पाना सम्भव नहीं था। दुर्योधन ने जब अर्जुन की ऐसी रण-चातुरी देखी तो उसके पांवों के नीचे की धरती खिसक गई। उसे लगा कि अर्जुन जैसा चतुर योद्धा हमारे पक्ष में एक भी नहीं है। वह भीष्म से बोला, "पितामह! मुझे ऐसा दिखाई देता है कि अर्जुन हमारे वीरों को घास की तरह काटकर धरती पर सुला देगा और आप तथा आचार्य द्रोण देखते ही रह जाएँगे। महारथी कर्ण इस आड़े समय में मेरा साथ दे सकता था, किन्तु आपके सेनापतित्व में युद्ध न करने की उसने शपथ खा रखी है। क्या आपके होते हुए मुझे निराश होना पड़ेगा? क्या आप एक अर्जुन को ठिकाने नहीं लगा सकते?"

दुर्योधन के कटु वचनों से खिन्न होकर भीष्म अर्जुन पर बाण-वर्षा करने लगे। भीष्म के कुछ बाण श्रीकृष्ण की छाती में जा लगे और वहाँ से रक्त की धारा बहने लगी। श्रीकृष्ण को घायल देखकर अर्जुन का क्रोध भड़क उठा। उसने पितामह पर तीखे बाणों की बौछार करके उन्हें घेर लिया। भीष्म ने भी अर्जुन

पर घोर बाण-वर्षा की। दोनों वीरों के रथ आपस में टकरा जाते, और इस तरह गुत्थमगुत्था हो जाते कि उन्हें पहचानना तक कठिन हो जाता। ध्वजाओं से ही उनकी पहचान होती थी।

सायंकाल होते ही युद्ध बन्द हो गया। आज के दिन पाण्डव सैनिकों ने अच्छा शौर्य दिखाया था। उन्होंने पिछले दिन का बदला कौरवों से ले लिया था। आज कौरव दुःखी और पाण्डव प्रसन्न थे।

□

तीसरे दिन प्रातः सेनापति भीष्म ने अपनी सेना की मोर्चे-बन्दी गरुड़ के आकार की बनाई। अगले सिरे की सुरक्षा का भार दुर्योधन ने सँभाला।

पाण्डव भी सावधान थे। अर्जुन और सेनापति धृष्टद्युम्न ने सलाह करके कौरवों की मोर्चेबन्दी को तोड़ने के उद्देश्य से अपनी सेना की मोर्चेबन्दी अर्ध-चन्द्राकार में की। उसके एक सिरे की सुरक्षा का भार भीमसेन ने और दूसरे सिरे की सुरक्षा का भार अर्जुन ने सँभाला।

युद्ध आरम्भ हुआ। दोनों पक्ष एक-दूसरे की मोर्चेबन्दी को तोड़ना चाहते थे। ऐसा लगता था कि आज का युद्ध निर्णायक युद्ध होगा। पाण्डवों के आक्रमण

से कौरव-सेना तितर-बितर हो गई। सेनापति भीष्म और आचार्य द्रोण ने अपने सैनिकों को किसी तरह इकट्ठा किया और फिर से मोर्चेबन्दी की। उधर भीमसेन से चोट खाके मूर्च्छित पड़ा दुर्योधन सचेत होकर उठ खड़ा हुआ। जब उसने अपनी सेना में सच्ची भगदड़ को देखा तो सेनापति भीष्म के पास जाकर बोला, "पितामह, आप और द्रोणाचार्य अपनी सेना को भी ठीक से सँभाल नहीं पाते। जब शत्रु का आक्रमण होता है तो सैनिकों में भगदड़ मच जाती है। भागती सेना को देखकर भी आप कुछ करते-धरते नहीं। यह कितनी लज्जा की बात है कि आपके होते हमारे सैनिक भागने लगे! पर आपको इस बात की जैसे कोई चिन्ता ही नहीं है। मुझे तो ऐसा लगता है कि मन से आप पाण्डवों की ओर हैं। यदि यह बात न होती तो आपके और आचार्य द्रोण के रहते पाण्डवों की क्या मजाल थी जो हमारी सेना का बाल भी बाँका कर पाते! आप दोनों मुझे स्पष्ट बता दें कि आपके मन में क्या है? यदि आप पाण्डवों का पक्ष लेना चाहते हों तो भले ही उनकी ओर चले जाएँ, परन्तु अनमने ढंग से कार्य करके मुझे धोखा न दें।"

दुर्योधन की मूर्खतापूर्ण बातों को सुनकर पितामह को क्रोध के स्थान हँसी आई। वह बोले, "दुर्योधन!

मैंने कितनी बार तुम्हें अपने मन की बात बताई है, पर तुम तो किसी की बात सुनते ही नहीं हो। मैंने तुम्हें कई बार समझाया कि पाण्डवों पर तुम्हें कभी विजय नहीं मिल सकती। पर तुम तो उस घमण्डी कर्ण के बहकावे में फँसे हुए हो। फिर भी मैं अपने कर्तव्य का पालन कर रहा हूँ। इस बुढ़ापे में मुझमें जितनी शक्ति और सामर्थ्य है, उतना मैं लड़ रहा हूँ।"

भीष्म ने अपनी सेना को सँभालकर पाण्डव-सेना पर भयंकर आक्रमण कर डाला। इस आक्रमण से पाण्डव-सेना के पाँव उखड़ने लगे। जो भी भीष्म के सामने आया, वही धराशायी हुआ। अब तो पाण्डव-सेना में भगदड़ मचने लगी। श्रीकृष्ण, अर्जुन और शिखण्डी ने सेना को अनुशासन में रखने का बहुत प्रयत्न किया, पर सेना नहीं सँभली। यह देखकर श्रीकृष्ण अर्जुन से बोले, "अर्जुन! यदि सेना में आत्म-विश्वास की भावना जगाना चाहते हो तो अभी भीष्म पर आक्रमण करके उन्हें पीछे धकेल दो। और कोई उपाय मेरी समझ में नहीं आता है।"

अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा कि रथ भीष्म के सामने ले चलिए। भीष्म ने भी अर्जुन को अपनी ओर आते देख लिया था। उन्होंने पहले ही बाणवर्षा करके उसे रोकने का प्रयत्न किया। परन्तु अर्जुन ने तीन तीखे

बाण मारकर भीष्म का धनुष ही तोड़ डाला। वह दूसरा धनुष लेकर उसपर बाण चढ़ा ही रहे थे कि अर्जुन ने एक बाण मारकर उसे भी तोड़ डाला। अर्जुन के इस बाण-कौशल पर भीष्म मुग्ध हो गए। अब वह अर्जुन पर बाण बरसाने लगे और अर्जुन अपने बाणों से उन्हें बीच में ही काटने लगा। भगवान् श्रीकृष्ण यह सब देख रहे थे। उन्होंने अर्जुन की प्रशंसा तो की ही नहीं, इसके विपरीत सोचने लगे कि अर्जुन पितामह के साथ पूरे मन से युद्ध नहीं कर रहा है। दादा भीष्म के प्रति उसके मन में जो श्रद्धा है, उसके कारण अर्जुन तो लिहाज कर रहा है और भीष्म का आक्रमण तेज होता जा रहा है। यदि अर्जुन संकोच के साथ युद्ध करता रहा तो स्थिति बिगड़ सकती है।

भीष्म ने जब अपने बाणों से श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों को घायल कर दिया तो श्रीकृष्ण क्रोधित हो गए। अब उन्होंने स्वयं भीष्म पर प्रहार करने का निश्चय किया। वह घोड़ों की रास छोड़कर रथ से नीचे कूद पड़े और एक टूटे हुए रथ का पहिया उठाकर भीष्म को मारने दौड़े।

रथ का पहिया उठाए, मारने के लिए लपकते हुए श्रीकृष्ण को देखकर भीष्म जरा भी नहीं घबराए। इसके विपरीत वे मन्द-मन्द मुस्कराते हुए बोले, "आइए,

श्रीकृष्ण जी, मेरा प्रणाम स्वीकार कीजिए। ओह! आपको मेरे लिए रथ से उतरना पड़ा और यह रथ का पहिया उठाना पड़ा। आज मैं धन्य हुआ! आपने अपने वचन को झूठा किया और अपने इस भक्त के वचन की रक्षा कर दिखाई। आपने कहा था कि मैं युद्ध में हथियार नहीं उठाऊँगा और मैंने भी निश्चय कर रखा था कि आपसे हथियार उठवाकर छोड़ूंगा। आपके हाथों यदि मैं मारा भी जाऊँ, तो भी मेरा जीवन सफल होगा।"

उधर श्रीकृष्ण को रथ से उतरकर भीष्म पर झपटते देखकर अर्जुन को अपने ऊपर लज्जा आई। यदि अर्जुन सावधान-सतर्क होकर युद्ध करता तो भगवान् श्रीकृष्ण को यह सब नहीं करना पड़ता।

अर्जुन रथ से उतरकर श्रीकृष्ण को वापस ले आया और पहले से अधिक चुस्ती से युद्ध करने लगा। क्षण-प्रतिक्षण अर्जुन शत्रुपक्ष के लिए भयंकर होता गया। हजारों कौरव वीरों को उसने यमलोक पहुँचा दिया। बहुत-से जान बचाकर भाग खड़े हुए। हजारों के शरीर घावों से भर गए और रक्त की नदियाँ बह निकलीं। कौरव-सेना में अर्जुन ने हाहाकार मचा दिया। शाम का झुटपुटा होते ही युद्ध बन्द हो गया और सभी सैनिक अपने-अपने शिविरों को लौट गए।

□

चौथे दिन सेनापति भीष्म ने नई व्यूह-रचना रची। वह आज पिछले दिन की हार का बदला लेना चाहते थे। उन्होंने अग्रिम पंक्ति के अपने सैनिकों को आक्रमण करने की आज्ञा दी।

पाण्डव-पक्ष में पिछले दिन की जीत का उत्साह था। महारथी वीर अर्जुन अपने ऊँचे रथ पर बैठकर शत्रु-पक्ष की व्यूह-रचना और गतिविधियों को देख रहे थे। उनके रथ पर हनुमान के चित्र-युक्त पताका फहरा रही थी। कौरव-पक्ष के आक्रमण को विफल करने और प्रत्याक्रमण करने के लिए पाण्डव वीर तैयार खड़े थे।

आज के युद्ध में हिडम्बा राक्षसी से उत्पन्न भीमसेन के पुत्र घटोत्कच ने विशेष पराक्रम दिखाया और कौरव-सेना में त्राहि-त्राहि मचा दी।

घटोत्कच द्वारा कौरव-सेना का विनाश होते देखकर सेनापति भीष्म आचार्य द्रोण से बोले, "आचार्य जी, इस राक्षस ने तो आज हमें बहुत हानि पहुँचाई। शाम होनेवाली है। हमारे सैनिक दिन-भर के युद्ध से थके हुए हैं। अँधेरा होते ही इस राक्षस की शक्ति और बढ़ जाएगी। इसलिए आज युद्ध बन्द करने की घोषणा कर दी जाए तो ठीक रहेगा।"

युद्ध बन्द हो गया। आज दुर्योधन के कई भाई मारे गए थे। भाइयों के शोक से वह बिह्वल था। उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। कुछ देर के बाद दुर्योधन उठा और सेनापति पितामह भीष्म के शिविर में जा पहुँचा। वह नम्रता-पूर्वक उनसे बोला, "पितामह! संसार जानता है कि आप, आचार्य द्रोण और कृप तथा हमारे पक्ष के अश्वत्थामा आदि अन्य कई वीर मृत्यु का भय नहीं मानते। आप लोगों की शक्ति के सामने पाण्डव कुछ भी नहीं हैं। पाँचों पाण्डव मिलकर भी हमारे पक्ष के किसी एक भी महारथी के सामने टिक नहीं सकते। फिर भी क्या कारण है कि पाण्डवों का पलड़ा युद्ध में दिन-प्रतिदिन भारी होता जा रहा है? हम प्रतिदिन रणभूमि में पिट रहे हैं। इसका कारण मेरी समझ में नहीं आता।"

भीष्म शान्त स्वर में दुर्योधन को समझाते हुए बोले, "पुत्र, मैंने कितनी ही बार तुम्हें समझाने का प्रयत्न किया, पर तुमने मेरी एक बात भी नहीं सुनी। अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है। पाण्डवों से सन्धि करके स्वयं भी राज-सुख भोगो और उन्हें भी राज-सुख भोगने दो। मैं तुम्हें एक बार फिर सावधान करता हूँ और चेतावनी देता हूँ कि अर्जुन और श्रीकृष्ण को हराने की शक्ति हममें से किसी में नहीं है। ये दोनों नर-नारायण

का अवतार हैं। उनका पक्ष न्याय-संगत और धर्म-सम्मत है। जीत धर्म की होती है।"

पितामह की बातें वह चुपचाप सुनता रहा, फिर बिना कुछ कहे चुपचाप अपने शिविर में लौट गया। लेटा-लेटा वह बड़ी देर तक सोचता रहा और सो गया।

□

पाँचवें दिन फिर युद्ध प्रारम्भ हुआ। आज भीष्म ने बड़ी सावधानी से मोर्चेबन्दी की थी। पाण्डव-पक्ष की मोर्चेबन्दी का काम आज युधिष्ठिर ने सँभाला। पाण्डव-सेना में सबसे आगे भीमसेन खड़ा हुआ।

आज तो भीष्म ने पाण्डव-सेना पर बाणों की झड़ी लगा दी। पाण्डव-सेना अपना बचाव करने में असमर्थ रही। भीष्म पितामह के भीषण युद्ध का सामना करने के लिए वीर अर्जुन आगे बढ़कर बाण-वर्षा करने लगा। द्रोणाचार्य, भीष्म और शल्य तीनों वीर महाबली भीमसेन का मुँह मोड़ने के लिए एकजुट होकर लड़ने लगे। यह देख शिखण्डी ने भीष्म और द्रोण दोनों पर तीखे बाण छोड़े। शिखण्डी के सामने आते ही भीष्म रणभूमि से चले गए। भीष्म का कहना था कि यह शिखण्डी जन्म से पुरुष नहीं है, इसलिए उसके साथ

युद्ध करना क्षत्रिय धर्म के विरुद्ध है।

आज सन्ध्या होने तक अर्जुन ने भी हजारों कौरव वीरों को समाप्त कर दिया। आज दुर्योधन ने सारी शक्ति अर्जुन को हराने में लगाई थी, पर अर्जुन का बाल भी बाँका न कर सका। जो भी वीर अर्जुन से लड़ने गया, वही मारा गया। अर्जुन के पराक्रम का अभिनन्दन करने के लिए पाण्डव वीरों ने उसे घेर लिया और जोर से जयजयकार करने लगे। पाण्डव-पक्ष के बढ़े हुए उत्साह को देखकर दुर्योधन का चेहरा मुर्झा गया। इसी समय भीष्म ने आज के युद्ध को बन्द करने की घोषणा कर दी। दोनों ओर के जीवित बचे वीर अपने-अपने शिविरों में विश्राम के लिए चले गए।

□

छठे दिन पाण्डव-सेना ने मकरव्यूह रचा और कौरव-सेना ने क्रौंचव्यूह। युद्ध प्रारम्भ हुआ। आज भी दोनों पक्षों के वीर कट-कटकर गिरने लगे। लाशों के ढेर लगने लगे। आचार्य द्रोण का सारथि मारा गया तो वे स्वयं रथ चलाने लगे। भीमसेन रथ छोड़कर, अकेला ही गदा घुमाता हुआ कौरव-सेना में जा घुसा और कौरव वीरों की हड्डियाँ तड़काने लगा। उसने दुर्योधन के कई भाइयों की जान लेकर ही दम लिया। धृष्टद्युम्न

जो पाण्डवों का सेनापति था, भीमसेन की सहायता को आ पहुँचा और उसे रथ पर बिठा लिया।

दोनों पक्षों की मोर्चेबन्दी टूट गई। सैनिक गुत्थमगुत्था होकर लड़ने लगे। आज भीमसेन और दुर्योधन में ज़ोर की टक्कर हुई। दुर्योधन घायल होकर रथ में गिर पड़ा। कृपाचार्य ने ठीक समय पर सहायता करके दुर्योधन की जान बचाई। इतने में भीष्म आ पहुँचे और सेना का संचालन करने लगे। उन्होंने पाण्डव-सेना को तितर-बितर कर दिया। सूरज पश्चिम में अस्त होनेवाला था। युद्ध बन्द हो गया।

□

आज युद्ध का सातवाँ दिन है। दुर्योधन का सारा शरीर घावों से भर चुका है और उसे पीड़ा भी खूब हो रही है। वह झल्लाया हुआ सेनापति भीष्म के पास गया और वही पुराना रोना रोने लगा, "पितामह! प्रतिदिन पाण्डवों की जीत होती जा रही है। फिर भी आप कुछ उपाय नहीं सोचते!"

भीष्म बोले, "दुर्योधन! ज़रा धैर्य से काम लो। हम इतने सारे महारथी तुम्हारी ओर से ही प्राणों का मोह छोड़कर लड़ रहे हैं। फिर तुम्हें चिन्ता किस बात की है?" यह कहकर भीष्म मोर्चाबन्दी के काम में

जुट गए। जब मोर्चाबन्दी पूरी हो चुकी तो वह दुर्योधन से बोले, "राजन् ! जरा अपनी विशाल सेना को तो देखो ! यह विशाल सेना तीनों लोकों को जीत सकने में समर्थ है। हम सबके रहते तुम्हें तनिक भी चिन्ता नहीं करनी चाहिए।" यह कहकर उन्होंने दुर्योधन को घावों पर लगाने का एक ऐसा लेप दिया, जिससे दुर्योधन की पीड़ा तुरन्त दूर हो गई।

आज कौरवों की सेना मण्डलाकार व्यूह में खड़ी थी। एक-एक हाथी के पास सात-सात रथ खड़े थे। प्रत्येक रथ की रक्षा के लिए सात-सात अश्वारोही सैनिक नियुक्त थे। एक-एक घुड़सवार की सहायता के लिए सात-सात धनुर्धारी वीर खड़े थे। एक-एक धनुर्धारी की सुरक्षा के लिए दस-दस ढाल-तलवार से सुसज्जित सैनिक खड़े थे। सभी वीर कवच पहने हुए थे। मण्डलाकार सेना के मध्य में विशाल सज्जित रथ पर दुर्योधन बैठा हुआ था।

पाण्डवों ने वज्र-व्यूह रचा था। कई मोर्चों पर लड़ाई हो रही थी। एक मोर्चे पर पाण्डव-वीर अर्जुन का सामना स्वयं भीष्म कर रहे थे। एक मोर्चे पर द्रोणाचार्य और विराट्राज भिड़े हुए थे। तीसरे पर अश्वत्थामा और शिखण्डी में ठनी हुई थी। चौथे पर दुर्योधन और धृष्टद्युम्न लोहा ले रहे थे। नकुल और

सहदेव अपने मामा शल्य पर प्रहार कर रहे थे। इसी तरह आज दसों मोर्चों पर घमासान युद्ध मचा हुआ था।

पितामह भीष्म जब परपोते अभिमन्यु से लड़ने लगे, तो अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा कि मैं पितामह पर आक्रमण करना चाहता हूँ, इस रथ को उधर ले चलिए। अर्जुन की सहायता को उसके चारों भाई भी वहाँ आ पहुँचे और पितामह को घेर लिया। अकेले भीष्म पाँचों पाण्डवों का सामना करने लगे। यह युद्ध अधिक देर नहीं चला, क्योंकि साँझ घिर आई थी और युद्ध रोक दिया गया। घायल और थके हुए सैनिक अपने-अपने शिविरों में चले गए।

□

आठवें दिन भीष्म ने कौरव-सेना को कछुए के आकार के व्यूह में खड़ा किया। उधर पाण्डवों ने अपनी सेना की रचना तीन शिखरों वाले व्यूह में की। इसके एक सिरे को महाबली भीमसेन ने, दूसरे सिरे को महान् योद्धा सात्यकि ने और बीचवाले सिरे को युधिष्ठिर ने सँभाला।

आज युद्ध प्रारम्भ होते ही महाबली भीमसेन ने दुर्योधन के आठ भाइयों का संहार कर डाला। कौरव-

पक्ष के अलंबुष के हाथों अर्जुन का एक पुत्र इरावान मारा गया। घटोत्कच ने जब देखा कि इरावान मारा गया, तो उसने ऐसी भयंकर गर्जना की कि सारी कौरव-सेना सुनकर थर्रा उठी। वह कौरव-सेना पर टूट पड़ा और उसे रौंदने लगा। घटोत्कच का सामना करने दुर्योधन आगे बढ़ा। उसे संकट में पड़ा जानकर भीष्म ने आचार्य द्रोण के नेतृत्व में एक सेना घटोत्कच से लड़ने भेज दी। उधर जब युधिष्ठिर को लगा कि कौरवों ने घटोत्कच को घेर लिया है, तो भीमसेन को सहायता के लिए भेज दिया। भीमसेन के युद्ध में कूद पड़ने पर उसकी भीषणता और बढ़ गई।

सूर्य पश्चिम दिशा में छिपने लगा था। आज का युद्ध इसी समय बन्द हो गया।

□

आज नौवाँ दिन है। दोनों पक्षों की सेनाएँ कट-मरकर छोटी हो गई हैं। फिर भी वीरों में साहस की कमी नहीं है। पितामह भीष्म के पास आकर जली-कटी बात कहना दुर्योधन का प्रतिदिन का कर्त्तव्य बन गया है। आज भीष्म ने उसे फिर समझाने का प्रयत्न किया। वे बोले, "पाँचों पाण्डवों और शिखण्डी को छोड़कर जो कोई भी मेरे सामने आएगा, उसे मैं

जीवित नहीं छोड़ूँगा। हम सबके बहुत-बहुत मना करने पर भी जो युद्ध तुमने प्रारम्भ किया है, अब उसके परिणाम से क्यों घबराते हो ? दूसरों को दोष देने के बजाय, वीरों की तरह युद्ध करो। इस समय यही तुम्हारा कर्त्तव्य भी है।"

दुर्योधन को विदा करके भीष्म मोर्चाबन्दी को दृढ़ करने में लग गए।

दुर्योधन ने दुःशासन को बुलाकर कहा, "प्रिय दुःशासन ! आज हमें अपनी पूरी शक्ति लगाकर पाण्डवों को पराजित करना होगा। पितामह ने कह दिया है कि वे शिखण्डी से युद्ध नहीं करेंगे, इसलिए तुम्हें इस बात का ध्यान रखना होगा कि शिखण्डी पिता के सामने न आने पाए।

आज सभी पाण्डव वीरों ने एक-साथ कौरव-सेनापति भीष्म पितामह पर आक्रमण कर दिया। दुर्योधन ने भीष्म की रक्षा के लिए दुःशासन को भेज दिया। भीष्म ने अकेले ही सारे पाण्डव-वीरों का मुँह मोड़ दिया। आज पाण्डव-सेना की भीष्म ने खूब गत बनाई। पाण्डव-सेना अनाथों की तरह बिखर गई।

पाण्डव-सेना की यह हालत देखकर श्रीकृष्ण रथ रोककर अर्जुन से बोले, "अर्जुन ! अपने कर्त्तव्य कर्म को पहचानो और पूरे मन से युद्ध करो। मैं यह देख

रहा हूँ कि तुम भीष्म पितामह पर पूरे पराक्रम से आक्रमण नहीं कर रहे हो। क्षत्रिय धर्म का स्मरण करके यहाँ अपना पौरुष दिखाओ। भीष्म का संहार किए बिना कौरवों को नहीं जीता जा सकता।"

श्रीकृष्ण की बात सुनकर अर्जुन ने सिर झुकाकर उत्तर दिया, "जिस पूजनीय पितामह ने हमें गोदी में उठाया, उन्हें मारने को मेरा मन तैयार नहीं होता। फिर भी आप कहते हैं तो मारूँगा। रथ चलाइए।"

अर्जुन ने कहा तो सही, पर उसका मन अब भी पूरी तरह पितामह पर प्रहार करने को तैयार नहीं था। वह केवल अपना बचाव कर रहा था। उधर भीष्म ग्रीष्म की दोपहरी के सूर्य की तरह चमक रहे थे और शत्रु-सेना को भून रहे थे।

अर्जुन को भीष्म की ओर बढ़ते देखकर पाण्डव-सेना में उत्साह की लहर दौड़ गई। पर भीष्म ने अर्जुन पर ऐसी घोर बाणवर्षा की कि रथ ही रुक गया। न तो अर्जुन दिखाई देता था और न श्रीकृष्ण, न रथ दिखाई देता था और न घोड़े। फिर भी श्रीकृष्ण रथ को सावधानी से चलाते रहे। अर्जुन ने बाण मारकर कई बार भीष्म के धनुष को काट गिराया। वह हर बार नया धनुष लेते और अर्जुन उसे भी काट डालता। भीष्म अर्जुन की प्रशंसा भी करते

और तीखे बाणों की बौछार करके घायल भी करते। श्रीकृष्ण के शरीर में भी भीष्म के बाणों से कई घाव हो गए।

श्रीकृष्ण ने झुंझलाकर अर्जुन से कहा कि तुम पूरे मन से नहीं लड़ रहे हो। इस तरह तो ये हमारी सेना का विनाश करके ही दम लेंगे।

आज भीष्म ने पाण्डव-पक्ष को बहुत क्षति की। सूर्यास्त के समय युद्ध बन्द हो गया। आज दुर्योधन कुछ प्रसन्न दिखाई दे रहा था।

□

दसवें दिन युद्ध आरम्भ हुआ। आज पाण्डवों ने एक चाल चली। उन्होंने शिखण्डी को आगे किया। शिखण्डी के ठीक पीछे अर्जुन का रथ था। सम्भवतः यह श्रीकृष्ण के कहने से हुआ था।

शिखण्डी से भीष्म के युद्ध न करने की बात सबको मालूम थी। शिखण्डी को देख भीष्म तो युद्ध से मुँह मोड़ लेते, किन्तु शिखण्डी इस अवसर का लाभ उठाकर उनपर खूब बाण बरसाता। शिखण्डी के रथ के पीछे से अर्जुन भी पितामह पर बाण-वर्षा करता रहता।

जब शिखण्डी ने तीखे बाणों से पितामह के वक्ष-स्थल को बींध डाला तो मारे क्रोध के उनकी आँखें

अंगारों की तरह लाल-लाल हो गईं।

पितामह भीष्म, जो क्रोध में भरकर विवेक खो रहे थे, फिर सावधान होकर शान्त हो गए। उन्हें अपनी प्रतिज्ञा की याद आई। वह शिखण्डी का प्रतिरोध किए बिना खड़े रहे। पर शिखण्डी ने तो बाण-वर्षा और भी तेज कर दी। भीष्म फिर भी शान्त रहे। अर्जुन ने भी इस अवसर का लाभ उठाया। वह भी जी कड़ा करके पितामह के मर्मस्थानों को बाणों से बींधने लगा। पर भीष्म तब भी शान्त रहे। उनके पास दुःशासन खड़ा था। वे उससे बोले, "देखो, ये बाण शिखण्डी के नहीं, अर्जुन के हैं।"

भीष्म शिखण्डी के बाणों की तो अधिक चिन्ता नहीं कर रहे थे, पर उसकी आड़ लेकर अर्जुन जो तीखे बाण मार रहा था, उन्हें रोकना चाहते थे। उन्होंने अर्जुन पर शक्ति-शस्त्र चलाया, पर अर्जुन ने बाण मारकर उसे भी बीच में ही रोक दिया। अब भीष्म को लगा कि आज विधाता वाम है। आज का युद्ध उनके जीवन का अन्तिम युद्ध होगा, ऐसा उन्हें लगा। भीष्म ढाल और तलवार लेकर ज्यों ही रथ से उतरने लगे, त्यों ही अर्जुन के चलाए बाणों से उनकी ढाल के टुकड़े हो गए। अर्जुन ने बाण-वर्षा क्षण-भर को भी बन्द नहीं की। उसके बाणों से पितामह का शरीर

छलनी बन गया। उँगली रखने-भर को भी ऐसी जगह नहीं बची, जहाँ बाण का घाव न हो। चुभे बाणों से सारा शरीर इस तरह भरा हुआ था जैसे साही के शरीर पर काँटे होते हैं। ऐसी अवस्था में भीष्म रथ से सिर के बल धरती पर गिर पड़े।

उनके गिरते ही पाण्डव-सेना ने बड़े ज़ोर से अर्जुन का जयकार किया। भीष्म पितामह के धराशायी होते ही कौरव-पक्ष में हाहाकार मच गया। भगदड़ मचने लगी।

भीष्म गिर तो पड़े, पर उनका शरीर धरती से नहीं लगा। उनके शरीर में बिंधे बाण आरपार निकल गए थे। उनका शरीर उन तीरों पर टिका हुआ ऊपर ही उठा रह गया। उस शर-शय्या पर पड़े भीष्म के शरीर से तेज फूटा पड़ता था।

भीष्म कौरवों-पाण्डवों के परदादा थे। उनके गिरते ही दोनों पक्षों ने युद्ध बन्द कर दिया। सभी प्रमुख लोग भीष्म के दर्शनों को उनके पास इकट्ठे होने लगे। सभी हाथ जोड़े और सिर झुकाए उनके पैरों की ओर खड़े हो गए।

इतने में भीष्म बोले, "मेरा सिर नीचे लटक रहा है। सिर के नीचे कोई सहारा दे दो।"

आस-पास खड़े लोगों में से कितने ही सिरहाना

जाने के लिए दौड़ पड़े। पर शर-शय्या पर लेटे भीष्म को किसी कोमल सिरहाने की आवश्यकता नहीं थी। उन्होंने अर्जुन को सहारा लगाने को कहा। अर्जुन ने तीन बाण निकालकर सिर के नीचे टिका दिए। लटका हुआ सिर उनपर टिक गया।

भीष्म बोले, "मैं अभी शरीर छोड़ना नहीं चाहता हूँ। आजकल सूर्य दक्षिणायन है; ज्यों ही उत्तरायण होगा, शरीर छोड़ दूँगा। आप में से जो भी इस युद्ध में जीवित बच जाए, मुझे देख जाए।"

भीष्म को अपने पिता शान्तनु से इच्छा-मृत्यु का वरदान मिला हुआ था। इसका अभिप्राय यह हुआ कि भीष्म जब इच्छा करेंगे, तभी उनकी मृत्यु होगी।

इसके बाद भीष्म सीधे अर्जुन से बोले, "बेटा, मुझे बड़ी प्यास लगी है। थोड़ा पानी तो पिलाओ!"

अर्जुन ने तुरन्त भीष्म के दाहिनी ओर की धरती पर एक बाण मारा। उसी क्षण वहाँ से पानी की एक धारा फूट निकली। उस धारा के शीतल जल से भीष्म ने अपनी प्यास शान्त की।

पास खड़े दुर्योधन को सम्बोधित करते हुए भीष्म बोले, "बेटा दुर्योधन! तुमने देखा न, अर्जुन ने मेरी प्यास कैसे बुझाई! क्या अर्जुन के सिवा किसी दूसरे में यह कौशल है? अर्जुन जैसा योद्धा संसार में दूसरा

नहीं है। अब भी समय है। सन्धि कर लो और सब सुख से रहो।"

दुर्योधन को पितामह की ये हितकर बातें भी अत्यन्त कड़वी लगीं। मौत को सामने देखने पर भी जैसे रोगी को औषध अच्छी नहीं लगती, वही दशा दुर्योधन की थी।

दुर्योधन वहाँ से चुपचाप खिसक गया। अन्य लोग भी अपने-अपने शिविरों को लौट गए।

□

जब कर्ण को सूचना मिली कि भीष्म पितामह घायल होकर रणक्षेत्र में पड़े हुए हैं, तो वह सीधा उनके पास पहुँचा और प्रणाम करके बोला, "पितामह! मैं आज तक नहीं समझ सका कि आप किस कारण मुझसे घृणा करते रहे?"

पितामह ने कर्ण की ओर देखा, फिर उसके सिर पर हाथ फेरकर आशीर्वाद देकर बोले, "कर्ण! तुम नहीं जानते कि तुम वास्तव में कौन हो। तुम सूत-पुत्र न होकर कुन्ती के सबसे बड़े पुत्र हो। यह बात मुझे देवर्षि नारद ने बताई थी। मैं तुमसे घृणा नहीं करता था। तुम दुर्योधन की मित्रता के कारण ही पाण्डवों के शत्रु बन गए थे। मुझे तुम्हारी यह बात अनुचित

लगी। तुम्हारी दानवीरता और शूरवीरता का मैं प्रशंसक हूँ। मेरी यह हार्दिक इच्छा है कि पाण्डवों के साथ तुम्हारी मित्रता होनी चाहिए।"

पितामह की बात सुनकर कर्ण बोला, "पितामह, मैं भी जानता हूँ कि मैं कुन्ती का पुत्र हूँ। फिर भी दुर्योधन ने मेरा जो सम्मान किया है, उसके कारण मेरा कर्त्तव्य है कि मैं उसकी सहायता करूँ। मैं इस इस संकट की घड़ी में दुर्योधन का साथ छोड़ना पाप समझता हूँ। यह मित्र के प्रति विश्वासघात होगा। मैंने आज तक आपके प्रति जो भी दुर्व्यवहार किया हो, उसके लिए क्षमा चाहता हूँ।"

कर्ण की बात सुनकर भीष्म बोले, "तुम अपनी इच्छा के अनुसार जो ठीक समझते हो करो। पर स्मरण रखना, जीत धर्म की ही होगी।"

भीष्म के शरशैया पर सो जाने पर भी युद्ध बन्द नहीं हुआ। पर प्रश्न था कि सेनापति किसे बनाया जाए? कौरवों ने कर्ण को सेनापति बनाने की बात कही। उनका विचार था कि अब तक क्योंकि कर्ण ने युद्ध में भाग नहीं लिया, इसीलिए हमारी हार होती रही। कर्ण के सेनापतित्व में हम पाण्डवों को पछाड़ डालेंगे। वैसे भी कर्ण स्वयं कह चुका था कि मैं अकेला ही सारे पाण्डवों को समाप्त कर दूँगा। पर बाद में

द्रोणाचार्य को सेनापति बनाने का निश्चय कर्ण की ही सम्मति से हुआ।

अठारह दिनों में यह युद्ध समाप्त हुआ। पाण्डवों की विजय और कौरवों की हार हुई। सारे कौरव वीर मारे गए। पाण्डवों में भी पाँचों भाई तो बच गए, किन्तु शेष सभी युद्ध में काम आए।

पाण्डवों को भी यह जीत बहुत महँगी पड़ी थी। जब सबसे बड़े पाण्डु-पुत्र युधिष्ठिर के हस्तिनापुर के राज्य-सिंहासन पर बैठने का समय आया तो युधिष्ठिर को लगा कि व्यर्थ में ही इस राज्य के लिए हमने अपने सम्बन्धियों को मारा। किन्तु अन्त में भगवान् वेदव्यास के समझाने-बुझाने से, बड़ी धूमधाम से उनका राज्य-अभिषेक सम्पन्न हुआ।

शासन की बागडोर सँभालने से पहले महाराज युधिष्ठिर शरशय्या पर पड़े भीष्म पितामह के पास गए। युधिष्ठिर के पूछने पर पितामह ने राजनीति की अनेक महत्त्वपूर्ण बातें युधिष्ठिर को बताईं।

सूर्य के उत्तरायण होने पर भीष्म ने स्वेच्छा से शरीर छोड़ दिया। उनका अन्तिम संस्कार युधिष्ठिर ने विधिपूर्वक सम्पन्न किया। अन्त में जल-तर्पण करके युधिष्ठिर ज्योंही गंगा से बाहर निकले, शोक के कारण पछाड़ खाकर धरती पर गिर पड़े। भीमसेन ने उन्हें

उठाया। धृतराष्ट्र और महर्षि व्यासदेव ने उन्हें शोक छोड़कर कर्त्तव्य-पालन की प्रेरणा दी।

भीष्म ने क्योंकि अपने पिता के लिए ही आजीवन विवाह न करने की भीषण प्रतिज्ञा की थी, इसलिए उनके कोई सन्तान तो थी नहीं जो उनका श्राद्ध करती या उनको जलांजलि देती। इसकी पूर्ति के लिए सन्ध्या-तर्पण करनेवाले हिन्दू भीष्म का भी तर्पण करते हैं।

भीष्म का समूचा जीवन निष्कलंक रहा। उनके जीवन के बारे में एक ही शंका की जाती है कि जब द्रौपदी को भरी सभा में निर्वस्त्र किया जा रहा था, उस समय भीष्म ने विरोध क्यों न किया? शस्त्र क्यों न उठाए?

कहते हैं भीष्म पितामह ने इस शंका का उत्तर भी जीवन के अन्तिम समय में दे दिया था। जब अन्तिम दर्शन करने पाण्डव उनके पास पहुँचे, तब द्रौपदी भी उनके साथ थी। भीष्म पितामह ने धर्म और राजनीति के बहुत उपदेश दिये। तब द्रौपदी ने शिकायत की, "आप इस समय तो बड़ा उपदेश बघार रहे हैं, उस समय आपको क्या हो गया था जब भरी सभा में मुझे नंगी करने का यत्न किया जा रहा था?"

उत्तर में भीष्म बोले थे, "बेटी! उस समय मेरे

शरीर में अधर्मी दुर्योधन का अन्न बोल रहा था। अधर्मी का अन्न खाने से बुद्धि का नाश हो जाता है। अब उस अन्न से बना सारा रक्त मेरे शरीर से निकल गया है, इसलिए अब मैं सच्ची बात कह सकने के योग्य हूँ।"

अपना स्वार्थ त्यागकर आदर्श की स्थापना करने-वालों के प्रति, भारतीय सदा ही सम्मान रखते रहे हैं। समाज को जीवनदानी, त्यागी और बलिदानी पुरुषों की सदा ही आवश्यकता होती है। उनके पद-चिह्नों पर चलकर ही पीढ़ियाँ उन्नति करती हैं। धर्मवीर, दानवीर, शूरवीर इसीलिए समाज में सदा पूज्य रहे हैं।

□□□